मीराँ बाई के काव्य दर्शन का अहिंसा और नारी सशक्तिकरण के विशेष सन्दर्भ में विवेचनात्मक अध्ययन

***डॉ. कृष्णबीर सिंह**

प्रस्तुत शोध पत्र मीराँ, मीराँ का काव्य दर्शन, अहिंसा और नारी सशक्तिकरण इन बिन्दुओं पर विशेष रूप से प्रकाश डालते हुए लिखने का प्रयास किया जा रहा है। मीराँ के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर भारतीय एवं विदेशी विद्वानों ने अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं सराहनीय शोधकार्य किये हैं। अनेकों स्वतंत्र अवधारणाओं को स्थापित भी करने का उद्योग किया है किन्तु इस शोध पत्र के प्रस्तुत बिन्दुओं पर चर्चा नहीं हो पाई। अथवा आंशिक विचार हुआ।

मीराँ एक महान, पवित्र, निर्भिक और विराट व्यक्तित्व का नाम है जिसे आज विश्व स्तर पर सम्मानीय परिचय प्राप्त है। वहीं दूसरी तरफ विद्वानों एवं शोधकर्ताओं ने मीराँ के नाम, जीवन एवं कृतित्व को सन्देह के घेरे में बन्द कर दिया है। भ्रम और सन्देह की ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है कि मीराँ मिथ प्रतीत होती है। चूँकि शोध पत्र के मूल विषय को उल्लेखित करने से पूर्व मीराँ व उसके जीवन पर भी विचार किया जाना अनिवार्य प्रतीत होता है अत: संक्षेप में मीराँ के व्यक्तित्व को देखना प्रासंगिक होगा।

प्रथम विवाद मीराँ और मीराँ से प्रारम्भ होता है। अर्थात मीराँ बाई का वास्तविक नाम क्या था? मीराँ बाई अथवा मीराँबाई। सानुनासिक 'रा' को विद्वानों ने अत्यन्त गंभीरतापूर्वक लिया और इसे इतना अधिक विवेचित विच्छेदित कर दिया कि सामान्य पाठक भयाक्रान्त हो गया। डॉ. सी.एल. प्रभात ने मीराँ के वैयक्तित्व एवं कृतित्व पर शोधकार्य किया है। इस विषय को डॉ. प्रभात ने पूरे हृदय से उठाया है[1]। नाम संबंधी यह विषय इतना विस्तृत है कि इस पर स्वतंत्र रूप से शोध प्रबन्ध लिखा जा सकता है। चूँकि शोधपत्र भाषा विज्ञान या व्याकरण से संबंधित नहीं है अत: स्थान, भाषा, परिवेश के अनुसार मीराँबाई नाम ही उचित प्रतीत होता है।

नाम के अलावा मुख्य रूप से अनेकों विवादित प्रश्न आज भी अनुतरित हैं-

जैसे-इतिहास में एक से अधिक मीराँ रचनाकार मिलती हैं।

मीराँ भाव विभोर होकर रचना गाती थी लिपिकर्ता कौन थी? क्या लिपिकर्ता ने मीराँ के भावों को मूल रूप में लिपिबद्ध किया?

मीराँ के उपलब्ध ग्रन्थों में अनेकों पाठ भेद मिलते हैं-मूल का निर्धारण किस आधार पर किया गया?

राजस्थान की मीराँ के अलावा शेष मीराँ कहाँ की थीं एवं उनका व्यक्तित्व कृतित्व क्या है?

किन्तु मैं पुन: स्मरण दिला दूँ कि प्रस्तुत शोध पत्र का क्षेत्र एवं उद्देश्य उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर खोजना अथवा इन प्रश्नों पर शोध करना नहीं है अपितु मीराँबाई के नाम से उपलब्ध पदों को शीर्षक में वर्णित बिन्दुओं के अनुसार विवेचित एवं विश्लेषित करना है।

जन्म-डॉ. सी.एल. प्रभात ने मीराँ का जन्म सन् 1504 ई. सम्वत् 1561 माना है[2]। इनका समर्थन डॉ. हुकमसिंह भाटी, श्र्ाीकृष्णलाल, डॉ. जी.राय चौधरी आदि ने किया है। डॉ. कल्याण सिंह शेखावत ने भी मीराँ पर अद्भुत व प्रामाणिक शोध कार्य किया है। डॉ. शेखावत ने मीराँ का जन्म सम्वत् 1555 वैशाख शुद तीज माना है[3]। इसी समय को ओझा जी ने भी स्वीकार किया है[4]। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एवं मिश्र्ाा बन्धुओं ने मीराँ का जन्म सम्वत् 1573 निर्धारित किया हैं। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी भी मीराँ का जन्म सम्वत् 1555 सन् 1498 ई. स्वीकार करते हैं[5]। स्वामी आनन्द स्वरूप ने मीराँ बाई का जन्म सम्वत् 1559 निर्धारित किया है[6]।

राजस्थान का प्रामाणिक इतिहास मीराँबाई की जन्मतिथि पर मौन है। कारण स्पष्ट है इतिहास में महिलाओं को उतना महत्त्व नहीं दिया जाता था जितना पुरुषों को। आज भी राजस्थान के गाँवों में यह परम्परा है कि पुत्र जन्म होते ही काशी की थाली को चीमटे से बजाया जाता है जबकि पुत्री के जन्म होने पर एक विशेष प्रकार का मातम छा जाता है। विशेषत: राजपूतों में उन दिनों कन्या जन्म पर अफसोस ही व्यक्त किया जाता था। मीराँबाई के जीवन से संबंधित जो भी साहित्य जिस स्वरूप में उपलब्ध हैं वह भी मतैक्य दिखाई नहीं देता। चाहे मीराँ के जन्म समय, जन्मस्थान की बात हो अथवा उसके पिता, भाई-बहिन या ससुराल पक्ष की बात हो।

पाँच सौ वर्ष पूर्व जन्मी मीराँ के विषय में प्रामाणिक दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं। जिन ग्रन्थों में मीराँ से संबंधित सूचना प्राप्त होती है वह पूर्णत: निष्पक्ष और सत्य नहीं कही जा सकती।

उपलब्ध मीराँ साहित्य के आधार पर मीराँ के कृतित्व एवं व्यक्तित्व का विवेचना करना ही उचित होगा।

मीराँ का शैशव देखते हैं तो हमें दो-तीन जनश्र्ाुतियाँ एवं अनुरंजित उल्लेख प्राप्त होते हैं।

अबोध बालिका मीराँ ने अपनी माँ से अपने वर के विषय में प्रश्न किया। माँ ने गोपाल की मूर्ति की तरफ संकेत करके उत्तर दिया कि यही तेरे वर है[7]। अबोध मीराँ ने स्वीकार कर लिया। जीवन पर्यन्त निर्वाह किया।

दूसरी घटना एक साधू के पास गोपाल की मूर्ति थी जिसे मीराँ ने लेना चाहा। मूर्ति मीराँ को प्राप्त हो गई[8], किंतु मीराँ उस मूर्ति पर ऐसी मुग्ध हुई कि परिणाम आपके सामने है। मीराँ चरित्र नामक ग्रन्थ में भी ऐसा उल्लेख है कि माता-पिता द्वारा मीराँ को कृष्णार्पित कर दिया गया[9]। अबोध मीराँ के व्यक्तित्व को बाल मनोविज्ञान की कसौटी पर जाँचना होगा। कपोलकल्पित अनुमानों का आलम्बन लेना न्यायोचित नहीं है। विद्वतजनों का मानना है कि मीराँ के पितामह राव दूदा जी अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति के उदार व्यक्ति थे। वे वैष्णव थे और संत महात्माओं का सम्मान किया करते थे[10]। किन्तु अवश्य ही कोई ऐसी दुर्घटना घटित हुई होगी अथवा ऐसा व्यवहार मीराँ को मिला होगा जिसके कारण मीराँ के व्यक्तित्व में विशाल परिवर्तन हुआ। अत: यह पुन: शोध का विषय है। वैसे भी मीराँ मध्यम या सामान्य परिवार की कन्या नहीं थी अपितु वह एक संभ्रान्त व राजपरिवार से संबंधित इकलौती कन्या थी[11] किंतु मीराँ के संयुक्त परिवार में राव वीरमदेव से मीराँ बाई का सम्पर्क अधिक था। राव वीरमदेव के 3 पुत्रियाँ एवं 13 पुत्र थे[12]। पुन: मूल प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर ऐसी कौन सी घटना घटित हुई कि मीराँ........।

इतिहास एवं मीराँ से संबंधित समस्त ग्रन्थ इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ हैं। विधि के विधान के अन्तर्गत ही मीराँ के प्रारब्ध में विधाता ने ऐसे लेख लिख दिये थे, कहकर सन्तोष किया जा सकता है जब तक इस विषय पर मनोवैज्ञानिक विधि से शोध पूर्ण नहीं हो जाता। संक्षेप में मीराँ से संबंधित जानकारी का उल्लेख निम्न ग्रन्थों में उपलब्ध है-

1. चौरासी वैष्णव की वार्ता[13]

***अध्यक्ष हिन्दी विभाग, एस.एस.जी. पारीक (पी.जी.) कॉलेज, जयपुर**

2. वैष्णव रचित भक्तमाल[14]
3. मुहतादास नैणसी री ख्यात[15]
4. सुखसारण रचित मीराँबाई की परची[16]
5. नागरीदास रचित नागर समुच्चय[17]
6. राठौड़ों री ख्यात और वंशावली[18]
7. ब्रह्मादास कृत भक्तमाल[19]
8. माधौदास रचित भक्तमाल[20]
9. मुरारीदान री ख्यात उदयभाण चांपावत री ख्यात[21]
10. प्रियदास रचित भक्तिमाल या भक्तिरस बोधिनी टीका[22]

उपर्युक्त ग्रन्थों एवं अन्य उपलब्ध सामग्री के अनुसार मीराँ बाई की माता का देहान्त उस समय हो गया था जब मीराँ मात्र दो वर्ष की थी। यदि हम पूर्व वर्णित दोनों तथ्यों पर ध्यान दें जिनमें मीराँ को उसकी माँ द्वारा गोपाल को पति बताया जाता है अथवा किसी साधू से प्राप्त गोपाल की मूर्ति से बालिका मीराँ का नैसर्गिक प्रेम वाली बात यहां स्वत: निर्मूल सिद्ध होती है कि यह घटना मीराँ की आयु दो वर्ष पूर्ण होने से पूर्व घटित हुई होगी। मात्र दो वर्ष से भी कम वय: की बालिका के मन मस्तिष्क पर ऐसा प्रभाव अंकित हुआ कि वह संसार की मोहमाया से ही नाता तोड़ बैठी?

प्राप्त तथ्यों के आधार पर मात्र इतना ही कहा जा सकता है कि माँ के स्वर्गवास हो जाने के उपरान्त बालिका मीराँ को घोर पारिवारिक प्रताड़नाओं, टीका टिप्पणियों एवं आक्रोश का सामना करना पड़ा होगा। परिवार के लगभग सभी सदस्यों से तिरस्कार प्राप्त मीराँ ने अपनी एक विशेष जीवन शैली अपना ली होगी क्योंकि राजपूत कन्याओं को स्वतंत्र रूप से घर से बाहर निकलने की आज्ञा नहीं थी। सम्वत् 1584 में मीराँ के पिता रत्नसिंह, राणा सांगा और बाबर के मध्य हुए युद्ध में राणा सांगा की तरफ से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। इससे पूर्व भी रत्नसिंह ने अनेक युद्धों में भाग लिया था। वे युद्धों में ही व्यस्त रहते थे।

निस्सन्देह बालिका मीराँ का बचपन माँ के आँचल के अभाव में एवं पिता के स्नेह से वंचित ही रहा। शनै: शनै: बालिका मीराँ के मन मस्तिष्क पर जीवन निस्सारता का मनोवैज्ञानिक भाव आच्छादित होता गया।

जीवन निस्सारता का रंग गाढा होता गया, कारण, मीराँ ने युवती होने से पूर्व ही अपने विभिन्न प्रियजनों को कालकवलित होते देखा। मृत्यु से प्रत्यक्ष साक्षात्कार ने मीराँ को जीवन, जगत और जीवन के भेद प्रभेदों को अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्वक समझा दिया। परिणामत: मीराँबाई का जीवन अपने बिछुड़े प्रियतम परमात्मा से मिलने हेतु तड़फड़ाने लगा।

यद्यपि मीराँ बाई पर विभिन्न प्रकाण्ड विद्वानों, शोधकर्ताओं ने अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किया है किन्तु मीराँ को एक सामन्ती परिवार की महिला के सन्दर्भ में जो परिभाषाएँ प्राप्त हुई है उन पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

अनेक विद्वानों ने मीराँ बाई के लिए **विद्रोहिणी** शब्द का प्रयोग किया है। इस शब्द के शब्दार्थ पर ध्यान देंगे तो इस शब्द के चरित्र एवं व्यक्तित्व का ज्ञान होगा। विद्रोह में हानि पहुँचाने का भाव सर्वोपरी निहित होता है। तो क्या मीराँ ने किसी को हानी पहुँचाई है? उत्तर होगा नहीं तो फिर उनके लिए इस शब्द का प्रयोग क्यों?

इसी भाँति मीराँ के साथ बहुप्रचलित रूप में जोड़ दिया गया शब्द है-**दीवानी**। मूलत: यह फारसी का स्त्रीलिंग शब्द है जिसके मुख्य शब्दार्थ हैं-दीवान का पद, वह न्यायालय जहां धन संपत्ति से संबंधित विवाद चलता हो, विक्षिप्त या पागल महिला।

मैं समझता हूँ मीराँबाई के लिए इन तीन शब्दार्थों का प्रयोग किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता। कारण, मीराँ तो अत्यन्त संवेदनशील और मेधावी स्त्री थी वह पागल या विक्षिप्त नहीं थी। यदि हम सुफियाना परिप्रेक्ष्य में दीवानी का अर्थ देखते हैं तो यह बात इस लिए स्वीकार्य नहीं है कि मीराँ की भक्ति में सुफियाना शैली नहीं है प्रमाण स्वरूप मीराँ के पद को प्रस्तुत किया जा सकता है-

हेरी म्हाँ दरद दिवाणी म्हाराँ दरद न जाण्या कोय।
घायल री गत घायल जाण्याँ हिबड़ों अगण संजोय।।

× × × ×

दरद की मार्‌याँ दरदर डोल्याँ वैद मिल्या नाहिं कोय
मीराँ री प्रभु पीर मिटाँगा जब वैद साँवरो होय।।

प्रस्तुत पद में दीवाणी शब्द आया है किन्तु देखना होगा कि किस सन्दर्भ में प्रयुक्त हुआ है। दर्द के साथ है। यह दर्द पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक नहीं है, शारीरिक भी नहीं है अपितु मानसिक और आत्मिक है। यह आत्मिक दर्द अपने चरमोत्कर्ष पर है। इसी दर्द के कारण मीराँ के शरीर में परमात्मा संबंधी दीवानापन- सा उत्पन्न होने लगा है। आगे मीराँ कहती हैं कि यह दीवानापन दैहिक भौतिक नहीं है अर्थात इस संसार का कोई भी रोग विशेषज्ञ इस रोग का निदान नहीं कर सकता। इसका तो मात्र एक ही चारागर है और वह है परमात्मा।

वैसे मीराँ के अनेक पदों में दर्द और दीवाणी शब्दों का उल्लेख हुआ है। यह बिछोह का दर्द है। परमात्मा से मीराँ की आत्मा की जुदाई की पीड़ा है। जहां परमात्मा में निष्ठुरता की छाया दिखाई देती हैं वही मीराँ की आत्मा ने शपथ ले ली है मिलन की। मीराँ प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से स्पष्ट कर रही है कि किसी भी अवस्था में मेरी आत्मा परमात्मा को प्राप्त करके ही साँस लेगी। विद्वत शोधार्थियों को मीराँ की आत्मा के इस दर्द को पैमाने से माँपने का उद्योग करना होगा। अत: हम मीराँ को प्रेम दीवानी के स्थान पर दर्द दीवानी रूप में देखेंगे तो प्रासंगिक होगा। प्रचलित अर्थ में मीराँ को दीवानी कह कर सम्बोधित नहीं किया जाना चाहिए। खैर!

मीराँ बनाम अहिंसा और नारी सशक्तिकरण-मीराँ के सन्दर्भ में यह दोनों शब्द पर्याय प्रतीत होते हैं। मीराँबाई के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर उपलब्ध साहित्य सामग्री का गहन अध्ययन करने के पश्चात् यह बात पूर्णत: स्पष्ट हो जाती है कि मीराँ ने कभी भी किसी बात या व्यवस्था के विरुद्ध हिंसात्मक प्रवृति या विचारधारा का प्रयोग नहीं किया। मीराँ ने जिस भाँति सांसारिक दु:खों को झेला था उसका किंचित भी बिम्ब उसके काव्य में दिखाई नहीं देता अपितु मीराँ की एक निश्चित विचारधारा अवश्य दिखाई देती है।

विज्ञान एवं मनोविज्ञान की दृष्टि एवं विचारों के अनुसार व्यक्ति के जीवन पर आनुवांशिक गुणों के अलावा प्राकृतिक एवं सांसारिक परिस्थितियों का भी विशेष प्रभाव पड़ता है। ग्यारहवीं शताब्दी से पूर्व मध्यकालीन भक्ति में बड़ी अनिश्चितता के साथ कहीं कहीं निश्चितता भी दिखाई देती है। किन्तु ग्यारहवीं शताब्दी से तेरहवीं शताब्दी के मध्य रामानुज माधव, निम्बार्क और विष्णु स्वामी का आर्विभाव हुआ। आगे चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दी में रामानन्द तथा वल्लभाचार्य इसी क्रम में दिखाई देते हैं। इस काल में भक्ति के रूप स्वरूप में व्यापक परिवर्तन होता है। रुढ़ियों को तोड़कर भक्ति में मानवीय पक्ष उत्पन्न होता है। राजनीतिक परिवेश हिन्दु एवं मुस्लिम संतों को एक प्लेटफार्म पर ले आता है जिसे हिन्दू समुदाय ने अत्यन्त सम्मान की दृष्टि से देखा है। कारण, मुस्लिम कवियों द्वारा भारतीय कथानक एवं पात्रों का चयन कर यहीं के परिवेशानुसार प्रस्तुत करना है। इस युग के अधिकतर सन्त सामान्य परिवार व वर्ग से ही आये थे चाहे वे आलवार संत हों अथवा रामानन्द के बारह शिष्यों में से सर्वाधिक क्रान्तिकारी एवं प्रखर समाज सुधारक कवि कबीर। इनकी विशेषता यही रही कि ये पराई पीर को महसूस करने में सिद्धहस्त थे। इस समूह में भारत के लगभग प्रत्येक भाग से सशक्त प्रतिनिधि दिखाई देते हैं असम के शंकरदेव, गुजरात के नरसी मेहता, महाराष्ट्र के नामदेव, पंजाब के गुरुनानक देव, तेलुगु में पोताना, तमिल में कम्बन आदि आदि।

यदि हम राजस्थान में कृष्ण भक्ति के उद्‌भव और विकास पर दृष्टिपात करते हें तो हमें एक दीर्घ इतिहास दिखाई देता है। ईसा की चौथी

शताब्दी से कृष्ण भक्ति का प्रादुर्भाव माना गया है। उस समय भक्त लोग श्र्ाीकृष्ण को वासुदेव, नारायण एवं विष्णु आदि रूप में पूजते थे। ईसा से 400 वर्ष पूर्व कृष्ण को देवरूप में पूजने के प्रमाण भी प्राप्त होते हैं। वल्लभ सम्प्रदाय में श्र्ाीकृष्ण को ही पूर्णानन्द पुरुषोतम स्वीकार किया गया है।

राजस्थान में वल्लभ सम्प्रदाय की विचारधारा का अत्यन्त प्रभावी असर दिखाई देता है। राजस्थान में जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, बीकानेर, अजमेर, काँकरोली एवं नाथद्वारा आदि स्थानों पर पुष्टिमार्ग के भव्य मंदिर बने हुए हैं।

निष्कर्षत: राजस्थान में पुष्टिमार्गीय परिवेश के प्रमाण तो प्राप्त होते हैं किंतु मीराँ ने यह मार्ग क्यों अपनाया-गंभीर प्रश्न है। यह अत्यन्त कपोल कल्पित प्रतीत होता है कि छोटी बच्ची को माँ ने श्र्ाीकृष्ण संबंधी जो भी सूचना एवं निर्देश दिया-बालिका ने उसे जीवन में उतार लिया। कौन माँ चाहेगी कि उसकी बेटी संन्यासी वर्ग में सम्मिलित हो? दूसरा प्रश्न मीराँ का परिवार गरीब या अभावग्रस्त नहीं था अत: यह कथन सर्वथा निर्मूल लगता है। मीराँ स्वयं कहती है-

माई श्र्ाी म्हाँ लियाँ गोविन्दाँ मोल। टेक।।
थें कह्याँ छाणे म्हाँ काँ चोड़णे लियाँ बजन्ता ढोल।
× × × ×
मीराँ कूँ प्रभु दरसण दीज्याँ पूरब जणम को कोल।।[24]

यहाँ मीराँ अपनी माँ को सम्बोधित करके कह रही है कि उसने गोविन्द को मोल लिया है। मोल लेने का अर्थ क्रय नहीं है अपितु निर्णय है जिसमें दृढ़ता के साथ दार्शनिक भाव निहित है कि आत्मा परमात्मा में कोई विभेद नहीं है। मीराँ ने स्पष्ट कह दिया है-पूरब जणम को कोल अर्थात यह तो मात्र बिछोह के कारण मीराँ दिखाई दे रही है अन्यथा आत्मा का अंश स्वतंत्र और सर्वव्याप्त है। यह पद मीराँबाई का मूल पद इस आधार पर कहा जा सकता है कि यह राग माँड में रचित है जो राजस्थानी संगीत का राग है।

जहाँ तक मीराँ बाई की अहिंसात्मक यात्रा की बात है तो सबसे पहले हमें अहिंसा के मूल आधार को समझना होगा। अहिंसा एक व्रत है कोई धर्म, संप्रदाय या पंथ नहीं। इसकी प्रत्येक शाखा प्रशाखा में तीक्ष्ण सूल कंटक बिछे हुए हैं एवं महाविष की धाराएँ अनरवत रूप से प्रवाहित होती रहती हैं। साधक बनकर इस यात्रों को पूर्ण समर्पण एवं सतर्कता से पार करने की अनिवार्यता है। मन व मस्तिष्क में पावन स्वच्छ विचारों की उपलब्धता के साथ तन को होम करने की प्रवृति होना अनिवार्य घटक है। यही कारण है कि अहिंसा के पथ पर चलने वालों की संख्या अंगुली के पौरवों पर है। ऐसी महान विभूतियों, आत्माओं को मानने वाले पीढ़ी दर पीढ़ी उपलब्ध हो जाते हैं किंतु उनका अनुकरण करने वालों की संख्या नगण्य है। महात्मा गाँधी का ज्वलन्त उदाहरण ले सकते हैं।

यही कारण है कि मीराँ का न कोई पंथ है न अनुयायी। मीराँ तो मानव समाज के हृदय में स्पन्दन बनकर समाहित हो गई है। भाषा, पंथ, सम्प्रदाय एवं समुदाय आदि की सीमा मीराँबाई को रोकने में सक्षम नहीं है।

मीराँ को श्र्ाीकृष्ण से लगाव नहीं है उसे तो गिरिधर नागर से सरोकार है। मीराँ एक प्रकाण्ड विदुषी थी जीवन अनुभवों ने मीराँ को परिपक्व स्त्री बना दिया था। मीराँ का गिरिधर केवल मीराँ का नहीं है अपितु वह तो सर्वसहायक, सर्वमंगलकारी है जो अपने नगर के निवासियों के सुख दुख का ख्याल रखता है यानी वह एक जिम्मेदार व्यक्तित्व है जिसे कर्त्तव्यबोध है। मीराँ को अपने गिरिधर पर पूर्ण विश्वास है। इसलिए मीराँ बड़े धैर्य के साथ कहती है-

भलो कह्याँ काँई कह्याँ बुरो री सब लया सीस चढ़ाय[25]

यही मीराँ की अहिंसा है। बदले में मीराँ दूसरों को भला बुरा या आक्रामक प्रतिरोध न करके अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित और जागरुक रहती है। चारों तरफ से पारिवारिक, सामाजिक दबाव आने पर मीराँ ने कुशाग्रता पूर्वक दूसरी ओर यह भी कह दिया-

मीराँ गिरधर हाथ बिकाणी, लोग कह्याँ बिगड़ी[26] **।।**

नारी शक्ति का प्रदर्शन करते हुए मीराँ अपने अस्तित्व का बोध करवाते हुए कहती है-म्हां गिरधर आगाँ णाच्या री।

लोक लाज कुलरा मरजादा, जगमा ठोक णा राख्याँ री।

यहाँ मीराँ ने समस्त जर्जर परम्पराओं को ध्वस्त कर दिया है। वह कोई असामाजिक कार्य नहीं करती जो कलंक या चारित्रिक दोष की श्र्ाोणी में आता हो अपितु वह जो नश्वर जीवन दर्शन को उल्लेखित करते हुए कहती है-

गयाँ कुमत लयाँ साधाँ संगत स्याम प्रीत जग साँची।
गायाँ गायाँ हरि गुण निसदिन काल ब्याल री बाँची।।

पुन: नश्वर शरीर की ओर इंगित करते हुए मीराँ कहती हैं-

पँचरंग चोला पहर्या सखी म्हाँ झिरमिट खेलण जाती यहां पंचतत्व से निर्मित यह शरीर और यह संसार झुरमुट अर्थात झाड़ झंकाड तुल्य। मीराँ का दर्शन अत्यन्त मार्मिक, संवदेनशील व गहरा है। वह बेबाकी से अपनी बात को पूरी मधुरता और सरलता से कहने में सक्षम है। अपने स्वतंत्र अस्तित्व का आभास करवाते हुए मीराँ को निर्भिकता देखने लायक है-जिसमें अहिंसा और सशक्तिकरण का सुन्दर योग है-

राणा विषरो प्यालो भेज्याँ पीय मगण हूयाँ।
मीराँ री लागण लग्याँ होणा हो जो हूयाँ।।

विष को जहर के सन्दर्भ में लेते हैं तो मेरी मान्यता है कि उपर्युक्त पदानुसार मीराँ को यह पूर्व में ज्ञात था कि राणा ने उसके लिए जो पेय पदार्थ भेजा है वह जहर है, जिसे प्रारब्ध समझकर मीराँ ने प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया, पान किया और अपनी स्वतंत्रता में लीन हो गई, परिणामत: जहर का कहर मीराँ पर नहीं टूटा। मीराँ के लिए वह विष अमृत तुल्य बन गया।

विज्ञान ऐसी घटना को किसी भी स्तर पर मानने को तैयार नहीं है। संभव है मीराँ के ससुराल पक्ष के समस्त लोगों ने मीराँ को भयंकर मानसिक शारीरिक हानि पहुंचाने की कौशिश की हो। किन्तु जो व्यक्ति अहिंसात्मक विधि से अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु अग्रसर होता है उसको रोक पाना इतना सरल नहीं है।

पुन: गाँधी का उदाहरण सामने है। अंग्रेजों ने हमारे वीर क्रान्तिकारियों को फाँसी के फन्दे पर अथवा गोली द्वारा मौत तक पहुंचा दिया। सुभाष चन्द्र बोस जैसे मेधावी क्रान्तिवीर आज तक एक मिथ, एक पहेली बने हुए हैं किन्तु अंग्रेजों को गाँधी के सामने घुटने टेकने पड़े।

क्या यह संभव नहीं था कि राणा का एक संकेत मीराँ की हत्या के लिए पर्याप्त न था। यदि राणा चाहते तो मीराँ को किसी भी विधि से मौत दे सकते थे क्योंकि मीराँ का दैवीय या चमत्कारिक रूप हमारे सामने नहीं है। न ही मीराँ की सुरक्षा हेतु लश्कर था, तो फिर क्या मीराँ के पास ऐसा क्या था कि सब स्वयं को असहाय महसूस करते थे। विशेषत: राजपूतों ने अपनी आन बान शान हेतु सर्वस्व न्यौछावर किया है।

अत: हमें मीराँ को पुन: एक नवीन वैज्ञानिक दृष्टि से देखना होगा। अहिंसा की देवी मीराँ के अन्दर जो नारी थी वह विदुषी, निर्भिक, चरित्रवान, संवेदनशील और जागरुक नारी थी क्योंकि विषपान का विरोध मीराँ ने नहीं किया। विषपान पश्चात् भी मीराँ के मन मस्तिष्क में प्रतिशोध भाव उत्पन्न नहीं होते अपितु पुन: सशक्त विधि से कहती है मैं जिस मिशन में लग गई हूँ लगी रहूंगी अब जो होना है वह होवे, अर्थात गीता के भाव मुखरित होते है-फल की ईच्छा व चिन्ता न करें।

मीराँ ने शांत भाव से विरोध किया है किन्तु उस विरोध में जो प्रखरता है वह गजब की है। स्पष्टवक्ता मीराँ कहीं भी घिघियाती नहीं है। विनम्र आक्रोश के साथ अपनी दृढ़ चिन्तन प्रक्रिया से साक्षात्कार करवा देती है।

तण मण म्हाराँ जावाँ जास्याँ म्हारो सीस लह्याँ। स्पष्टोक्ति का एक अन्य उदाहरण और देखिये-

नहिं सुख भावै धारो देसलड़ो रँगरुड़ो
थाँरे देसाँ में राणा साध नहीं छै, लोग बसै सब कूड़ो।
या फिर यह-
राणाजी थे क्याँने राखो म्हाँसूँ बैर।
थें तो राणाजी म्हाँने इसड़ा, लागो ज्यों ब्रच्छन में कैर।

इससे पूर्व सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि इतिहास में उपलब्ध साक्ष्यों में यह स्वयं सिद्ध है कि मीराँ को पति भोजराज का वैवाहिक साथ लगभग सात वर्ष तक प्राप्त हुआ। मीराँ के पदों में अथवा अन्य किसी ग्रन्थ में यह उल्लेख नहीं है कि भोजराज ने अपनी पत्नी मीराँ को ईशभक्ति हेतु प्रतिबंधित किया हो। प्रमाण हैं भोजराज ने मीराँ के लिए एक कृष्ण मंदिर का निर्माण करवाया था[29]।

मीराँ के पदों में सास, ननद आदि के विषय में उल्लेख है। पति अथवा देवर के नाम के साथ उल्लेख नहीं है एवं न ही मीराँ ने उनके रिश्ते वाले नामों से ही सम्बोधित किया है। राणा जी का प्रयोग बारम्बार आया है। यह गहन शोध का विषय है।

दूसरा मीराँ के अधिकतर पदों में **'लोक लाज कुल काण न मानूँ'** का उल्लेख आया है। यह मीराँ द्वारा सीधे शब्दों में यह कहने का प्रयास है कि समाज की समस्त जर्जर परम्पराओं को ध्वस्त करने में ही लाभ है। मानव को इन समस्त व्याधियों से निजात पाने हेतु नवीन विचारधारा से स्वतंत्र रूप से चिंतन करना होगा। मीराँ मात्र कहती नहीं है अपितु स्वयं करके दिखाती है वह स्वयं का ही उदाहरण प्रस्तुत करती है। मीराँ में बड़बौलापन या नाम की भूख नहीं है। वह समस्त समाज में, मानव जाति में प्रेम की बहार देखना चाहती है। यही मीराँ का अहिंसात्मक अभियान है।

बड़ी आसानी से समझ लेते हैं कि मीराँ ने चित्तौड़ व मेड़ता छोड़ दिया। वह वृन्दावन गई और फिर गुजरात में चली गई। मीराँ ने नारी उत्थान हेतु एक अभियान चलाया था जो प्रत्यक्ष रूप से स्वयं के रूप में प्रस्तुत था किन्तु परोक्ष रूप में समस्त नारी जाति के उत्थान हेतु अभियान था। वह सती न होने की बात कहती है। वह स्वाभिमान के साथ जीवन जीने की बात करती है। वह पुरुष के तुल्य नारी स्वतंत्रता की बात करती है।

चौरासी वैष्ण की वार्ता में मीराँ से संबंधित तीन प्रसंगों का उल्लेख है, जो मीराँ की अहिंसा प्रवृति को स्पष्टत: परिलक्षित करते हैं-

गोविन्द दुबे का मीराँ बाई के घर जाने का उल्लेख है किन्तु जैसे ही महाप्रभु वल्लभाचार्य को इसकी सूचना प्राप्त हुई, वल्लभाचार्य ने गोविन्द दुबे को पत्र लिखा, जिसे पढ़कर गोविन्द दुबे तुरनत मीराँ के घर से चल दिये। मीराँ ने दुबे को रुकने का आग्रह किया किन्तु वे वल्लभाचार्य के आदेश की अवहेलना नहीं कर सकते थे।

दूसरी घटना कृष्णदास की है। वे साधू सन्तों सहित द्वारिका रणछोड़जी के दर्शन करके लौटते समय मीराँ के गाँव में रुके, मीराँ से मिले भी किन्तु मीराँ द्वारा भेंट दिये जाने पर अस्वीकृत कर दी।

तीसरी घटना अत्यन्त गंभीर है। मीराँ के पुरोहित रामदास एक बार ठाकुरजी की प्रतिमा के समक्ष आचार्य महाप्रभु के पद गा रहे थे। मीराँ ने पुरोहित जी को ठाकुर जी का कोई पद गाने का अनुरोध किया। पुरोहित ने मीराँ को अपशब्दों द्वारा अपमानित किया एवं वह अपना परिवार लेकर वहाँ से अन्यत्र चला गया।

यदि हम इन तीनों घटनाओं पर सूक्ष्म विवेचन करें तो इन तीनों में पुरुष का अहंकार व उसकी विक्षिप्त मानसिकता के स्पष्ट दर्शन होते हैं। मीराँ की आत्मिक शक्ति देखिये, मीराँ तनिक भी विचलित नहीं हुई। न ही मीराँ ने अपनी सोच व अपना निर्णय बदला। वह तो प्रत्येक रुढ़ी को तोड़ देना चाहती थी। मीराँ दर्शन में शुद्ध भारतीयता है। वह एक ऐसी स्त्री के रूप में प्रस्तुत होती है जो पुरुष का पयार्य नहीं अपितु पूरक है। वह रचनाकार के रूप में उपस्थित होकर पुरुष के अहंकार को खंडित करती है। जीव स्वामी व मीराँ के संवाद इसका बज्र प्रमाण हैं, मीराँ का वृन्दावन जाना केवल नारी की दीन दशा को अंकित करते हुए उनका उत्थान एवं उसकी स्थिति को बेहतर करने की ओर संकेत करता है।

मीराँ बाई पर नये चिंतन व नई मानसिकता के साथ शोधकार्य अपेक्षित है। वह न कबीर की तरह अक्खड़ है, न डाँटती है न धमकाती है। वह तुलसी से भी सर्वथा भिन्न है। मीराँ पूरी शालीनता के साथ अपने ममत्व का प्रसाद वितरित करते हुए एक महान सशक्त नारी के अहिंसात्मक स्वरूप में प्रकट होकर कुरीतियों, रुढ़ियों एवं सामाजिक विकृतियों को तोड़कर पुरुष एवं नारी की समानता की बात मनोवैज्ञानिक आधार पर करती है। मीराँ पारे की भाँति तरल व सरल दिखती है किन्तु है बहुत वजनी।

मीराँ सम्पूर्ण भारतीय दर्शन का प्रतिनिधित्व करते हुए नारी के गौरव को स्थापित करती है। ऐसी निर्भिक, एकाग्रचित विदुषी, अहिंसा, प्रेम, सौहार्द व नारी जाति का कुशल प्रतिनिधित्व करने वाली मीराँ का अन्य उदाहरण उपलब्ध नहीं होता। अस्तु।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. सी.एल. प्रभात-मीराँ-जीवन और काव्य, पृष्ठ 450
2. डॉ. सी.एल. प्रभात-मीराँ-जीवन और काव्य, खण्ड 1 पृष्ठ 105
3. डॉ. कल्याण सिंह शेखावत-मीराँ की प्रामाणिक जीवनी, पृष्ठ 17
4. ओझा-उदयपुर राज्य का इतिहास, पृष्ठ 359
5. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी-मीराँबाई की पदावली, पृष्ठ 18
6. स्वामी आनन्दस्वरूप-मीराँ सुधा सिन्धु-पृष्ठ 8
7. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी-मीराँ की पदावली, पृष्ठ 21
8. वही
9. वाडांक 1517, छन्द 17, मीराँ चरित्र मराठी-रामदासी संशोधन मंडल धुलिया
10. डॉ. सी.एल.प्रभात-मीराँ-जीवन और काव्य, भाग 1 पृष्ठ 114
11. श्र्याी भक्तमाल सटीक, रूपकला, पृष्ठ 714
12. डॉ. सी.एल. प्रभात-मीराँ-जीवन और काव्य भाग 1 पृष्ठ 112
13. डॉ. हरिनाथ टण्डन-वार्ता साहित्य : एक वृहत् अध्ययन
14. श्र्याी भक्तमाल रूपकला, पृष्ठ 712
15. बदरीप्रसाद साकरिया (सम्पादक)-राजस्थान प्राच्य विद्या प्रति, जोधपुर
16. डॉ. नारायण सिंह भाटी-राजस्थान शोध संस्थान, जोधपुर
17. सम्पादक-राधाकृष्णदास
18. राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में उपलब्ध ग्रन्थ सं. 20130 पर
19. उदयशंकर उज्ज्वल-रा. प्रा. वि. प्र. उदयपुर
20. डॉ. सी. एल. प्रभात-मीराँबाई पृष्ठ 50-51
21. श्र्याी नटनागर शोध संस्थान सीतामऊ (मध्यप्रदेश) में उपलब्ध ग्रन्थ।
22. श्र्याी भक्तमाल रूपकला, पृष्ठ 934
23. गोपालसिंह राठौड़-जयमलवंश प्रकाश, पृष्ठ-72
24 सं. परशुराम चतुर्वेदी-मीराँबाई की पदावली, पद सं. 22, पृष्ठ 101
25. वही पद सं. 13, पृष्ठ 98
26. वही पद सं. 14 पृष्ठ 99
27. वही पद सं. 17 पृष्ठ 99
28. वही पद सं. 18 पृष्ठ 100
29.डॉ. कुसुम कुलश्र्याेष्ठ-मीराँ का व्यक्तित्व-पृष्ठ 244
30. डॉ. हरिनाथ टण्डन-वार्ता साहित्य : एक अध्ययन